# स्वर लेखन

घोष रचनाओं का लेखन करने के लिए प्रयुक्त स्वरलिपि, उससे संबंधित शब्दों की परिभाषा तथा अन्य संबद्ध विषयों का संक्षिप्त परिचय यहां दिया गया है । 'घोष परिचय' पुस्तक से अधिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ।

**स्वर :** वाद्यों के वादन से निर्मित कंपित वायुमंडल के ध्वनितरंगों से नाद सुनायी देता है । संगीतोपयोगी नादस्थानों को 'स्वर' कहते हैं ।

**वंशी :** वंशी में **स री ग म प ध नि** इस क्रम से सात स्वर बजाए जाते है । प्रत्येक स्वर का एक नाम तथा निश्चित कंपनसंख्या होती है । **री ग ध नि** यह चार स्वर अपनी निश्चित क्षमता से कम कंपन के तथा **म** अधिक कंपन का भी हो सकता है । इन पांचों को 'विकृत स्वर' कहते हैं । इनके स्वराक्षरों के नीचे छोटी अधोरेखा खींचते हैं । ये स्वराक्षर निम्न प्रकार से लिखते हैं ।

**स री॒ री ग॒ ग म म॒ प ध॒ ध नि॒ नि**

**स्वर-सप्तक :** सात स्वरों के स्वरसमूह को 'स्वर-सप्तक' कहते हैं । सहजता से फूंक लगाने पर 'मध्य-सप्तक' मिलता है । इसके नीचे से मिलने वाले सात स्वरों को 'मंद्र-सप्तक' एवं ऊपरी स्तर के सात स्वरों को 'तार-सप्तक' कहते हैं । ये तीनों स्वरसप्तक निम्नानुसार लिखते हैं ।

मंद्र : **स़ री़ ग़ म़ प़ ध़ नि़** मध्य : **स री ग म प ध नि** तार : **सं रीं गं मं पं धं निं**

विकृति-चिन्ह तथा सप्तक-चिन्ह इन दोनों का उपयोग कर, तीनों सप्तकों में विकृत-स्वरों के सभी संभाव्य प्रकार नीचे दिए है ।

मंद्र-सप्तक : **री़॒ ग़॒ म़॒ ध़॒ नि़॒** मध्य-सप्तक : **री॒ ग॒ म॒ ध॒ नि॒** तार-सप्तक : **रीं॒ गं॒ मं॒ धं॒ निं॒**

**राग :** स्वरों के विशिष्ठ संयोगों से रागों का निर्माण होता है । संयोग अनेक विध हो सकते हैं, किंतु जिन स्वर-संयोगों में रंजकता होती है, वेही 'राग' कहलाते हैं । स्वरों में आरोह-अवरोह, वादी-संवादी, वर्ज्यावर्ज्य आदि भेद हैं । इनका ध्यान रखकर स्वरों का जो विन्यास किया जाता है, उसीसे 'राग' का आविष्कार होता है ।

**शंख :** शंख वादन में कुल पांच स्वर होते हैं । वे निम्नानुसार हैं ।

**स़ प़ स ग प**

इसके आगे **नि॒** तथा **स** स्वर, भी आते है, जिनका उपयोग क्वचित किया जाता है ।

**आनक तथा अन्य तालवाद्य :** घोष के पणव, आनक, खर्जनिक, त्रिभुज, झल्लरी जैसे तालवाद्यों के वादन का लेखन निम्न प्रकार से किया जाता है । उन्हें ध्वन्याक्षर कहते हैं ।

| **वाद्य** | **ध्वनि** | **ध्वन्याक्षर** |
|---|---|---|
| पणव | ध्वंकार | **ध्व** |
| खर्जनिक | धंकार | **ध** |
| आनक | तंकार | **त** |
| त्रिभुज | टंकार | **ट** |
| झल्लरी | झंकार | **झ** |

शारिकाओं द्वारा आनक पर आघात करने से 'तंकार' उत्पन्न होता है । आनक के वादन विन्यास को व्यक्त करने के लिए **'त'** के अतिरिक्त और भी ध्वन्याक्षरों का उपयोग किया जाता है, जिनका विवरण निम्नानुसार है ।

| **अपेक्षित वादन** | | **ध्वन्याक्षर** |
|---|---|---|
| ★ दोनों शारिकाओं से एक साथ आघात : | --- | **थ** |
| ★ दोनों शारिकाओं से एक साथ अनुतंकार : | --- | **थ्र** |
| ★ प्रमुख तंकार के किंचित् पहले दूसरे शारिका से - | | |
| १. एक तंकार : | --- | **त्त** |
| २. अनुतंकार सहित तंकार : | --- | **त्रत** |
| ★ केरवा रणन : (दा बा दा बा) तत तत तत तत = | --- | **त्र** |
| ★ खेमटा रणन : (दा) ततत = | --- | **त्र** |
| ★ शारिकाएं परस्पर टकराने से आनेवाली 'टिक्' ध्वनि : | --- | **+** |

**रणन :** तंकार को यदि नियंत्रित नहीं किया, तो शारिका आवरण पर दो-चार बार उछलती है । क्रमेण क्षीण होते जाने वाले इस नाद को 'अनुतंकार' कहते हैं । इनका योग्य नियंत्रण कर, (१) केवल तंकार, (२) एक तंकार एवं एक अनुतंकार अथवा (३) एक तंकार

एवं दो अनुतंकार प्राप्त कर सकते हैं । इस प्रकार के तंकारानुवर्ति अनुतंकार के साथ साथ, तांत के प्रत्याघाती कंपनों को मिलाकर 'रणन' बनता है । केरवा रणन में चार तंकारानुवर्ति अनुतंकार तथा खेमटा रणन में एक तंकार के बाद दो अनुतंकारों का वादन अपेक्षित है । खेमटा ताल में रणन संघ का वैशिष्ठ्य है ।

**मात्रा :** स्वर लेखन में जिस प्रकार कौनसा स्वर बजेगा यह स्पष्ट लिखते है, उसी तरह वह स्वर कितने समय तक बजेगा यह भी निर्देशित करना आवश्यक है । इस कालमापन के इकाई को 'मात्रा' कहते हैं । इसका कोई अलग चिन्ह नहीं है ।

जब कोई स्वराक्षर या ध्वन्याक्षर अकेला लिखा जाता है, तब उसका अर्थ है कि वह स्वर या ध्वनि एक मात्रा की है । जैसे - **स री ग त ट झ त्र** आदि ।

**मात्रांश :** जब एक 'मात्रा' में एक से अधिक स्वर या ध्वनि आते हैं तब उन स्वरों या ध्वनियों के लिए अपेक्षित कालमान को 'मात्रांश' कहते हैं । एक मात्रा में आने वाले इन स्वराक्षरों – ध्वन्याक्षरों के नीचे एक कोष्टक लगाया जाता है ।

जैसेः - यदि एक मात्रा १/२ सेकंद की होने पर -

**स** - १ मात्रा में १ स्वर (एक स्वर $^{1}/_{2}$ सेकंद का होगा)
**स री** - १ मात्रा में २ स्वर (हर एक स्वर $^{1}/_{4}$ सेकंद का होगा)
**स ग प** - १ मात्रा में ३ स्वर (हर एक स्वर $^{1}/_{6}$ सेकंद का होगा)
**त त त त** - १ मात्रा में ४ स्वर (हर एक स्वर $^{1}/_{8}$ सेकंद का होगा)

रचना-शीर्षक के दाहिनी ओर ताल के पश्चात दिया हुआ अंक (जैसे - ३६०, २४०, १८०, १२०, १०० इ.), एक मिनट में उस रचना की कितनी मात्राएं बजेगी यह दर्शाता है । उदा. 'खेमटा ३६०' ऐसा लिखा है, तो संचलन की गति एक मिनट में १२० रहेगी, किंतु मात्राएं ३६० बजेगी ।

**अवग्रह :** किसी भी स्वर को एक या अधिक मात्रा या मात्रांश के लिए दीर्घ करना हो, तो उस स्वर-विस्तार को **'S'** इस अवग्रह चिन्ह से दर्शाया जाता है; तथा उसका उच्चार **'अ'** होता है । उदा. यदि एक मात्रा का कालांश $^{1}/_{2}$ सेकंद हो, तो -

**स री ग S** ..... एक मात्रा **ग** विस्तार ($^{1}/_{2}$ सेकंद)
**प S S S** ..... तीन मात्रा **प** विस्तार ($1^{1}/_{2}$ सेकंद)
**स S स स** ..... प्रथम **'स'** का १ मात्रांश विस्तार ($^{1}/_{8}$ सेकंद)
**स S S ग** ..... प्रथम **'स'** का २ मात्रांश विस्तार ($^{1}/_{4}$ सेकंद)

**यति :** किसी भी स्वर का (एक या अधिक मात्रा या मात्रांश के लिए) विराम करना हो, तो **'–'** इस 'यति-चिन्ह' से किया जाता है । उसका उच्चार **'य'** होता है ।

उदा. यदि एक मात्रा का कालांश $^{9}/_{२}$ सेकंद हो, तो -

**प म ध –** : **'ध'** के बाद १ मात्रा यति ($^{9}/_{२}$ सेकंद)

**त त – त** : दुसरे **'त'** के बाद १ मात्रांश यति ($^{9}/_{८}$ सेकंद)

**स –** : **'स'** के बाद १ मात्रांश यति ($^{9}/_{४}$ सेकंद)

**– प** : प्रथम १ मात्रांश यति ($^{9}/_{४}$ से.) बाद में **'प'** ($^{9}/_{४}$ से.)

अभ्यास की दृष्टि से प्रारंभ में यति के स्थान पर **'य'** कह सकते है । बाद में **'य'** का उच्चारण छोड कर, मन में उतने यति की गिनती करते हुए कहिए या बजाइए ।

अवग्रह तथा यति साथ साथ आने पर लेखन निम्नानुसार होगा ।

**री म ऽ –** : १ मात्रा **म** विस्तार के बाद १ मात्रा यति ($^{9}/_{२}$ सेकंद)

**स ऽ – ग** : १ मात्रांश **स** विस्तार के बाद १ मात्रांश यति ($^{9}/_{८}$ सेकंद)

अवग्रह तथा यति को स्वर जैसा ही माना जाता है । इसलिए इनके चिन्ह भी स्वराक्षर-ध्वन्याक्षर के स्तर पर ही अंकित किए जाते हैं ।

**ताल :** मात्राओं की विशिष्ठ, नियमबद्ध एवं रंजक योजना को 'ताल' कहते हैं । मात्राओं के इस विन्यास में जब ह्रस्व-दीर्घता, आवर्तनात्मक गति, अवसान अथवा वस्तुमान, समांतरता, यति तथा कुछ बोल होते हैं, तब इसको 'ताल' की संज्ञा प्राप्त होती है ।

लेखन करते समय प्रयुक्त गट, गण, चरण आदि के चिन्ह तथा वर्णन निम्नानुसार है ।

**गट :** ताल के अनुसार एक या अधिंक मात्राओं से बने विशिष्ठ समूह को 'गट' कहते हैं । गट-चिन्ह **','** ऐसा होता है ।

**गण :** दो या अधिक गटों के समूह को 'गण' कहते हैं । गण-चिन्ह **'।'** ऐसा होता है, जिसे 'गणदंड' कहते हैं ।

**चरण :** दो या अधिक गण एकत्र आने पर अथवा गणों के ताल-आवर्तन से 'चरण' बनता है । चरण-चिन्ह **'॥'** को 'चरण-दंड' कहते है, जिसे चरण के प्रारंभ तथा अंत में अंकित करते हैं ।

**पुनश्चरण :** किसी एक चरण का पुनर्वादन अपेक्षित होने पर, उस चरण के अंत में 'पुनश्चरण' का **':॥'** यह चिन्ह लगाया जाता है ।

**केरवा ताल :** इसमें ४ मात्राएं तथा उसके १ गण में २ मात्राएं होती है । केरवा-१२० लय के १ मिनट में $^{1}/_{2}$ सेकंद की १२० मात्राओं का वादन होता है । यह ताल १०० तथा १६० लय का भी होता है, जिनका प्रयोग कुछ उद्‌घोषों में किया गया है ।

**खेमटा ताल :** उसमें १२ मात्राएं, तथा इसके १ गण में ६ मात्राएं होती है । इस ताल में संचलन करते समय $^{1}/_{६}$ सेकंद की ३६० मात्राओं का वादन होता है ।

**दादरा ताल :** यह ताल ६ मात्राओं का तथा इसके एक गण में ३ मात्राएं होती है । लय १२० का हो, तो हरेक मात्रा $^{1}/_{2}$ सेकंद की होती है । यह ताल १८० लय का भी होता है ।

**झपताल :** झपताल १० मात्राओं का तथा प्रत्येक गण में ५ मात्राएं होती है । इसके एक मिनट में $^{1}/_{४}$ सेकंद की २४० मात्राओं का अथवा $^{1}/_{2}$ सेकंद की १२० मात्राओं का वादन होता है ।

**रूपक ताल :** इसमें सात मात्राएं होती है । इसके १ मिनट में $^{1}/_{2}$ सेकंद की १२० मात्राओं का वादन होता है ।

**लय :** एक मिनट में बजाए जाने वाली मात्राओं की संख्या उस रचना का 'लय' होती है ।

**सांतर :** शंख, वंशी आदि वाद्यों में मुखाग्र पर 'जिव्हाघात' (Tonguing) करते हुए प्रत्येक स्वर का अलग से बजाना ही 'सांतर' वादन कहलाता है । स्वरांतर का अन्य चिन्ह न लिखा हो, तो वादन 'सांतर' है ऐसा समझना चाहिए ।

**निरंतर :** इन वाद्यों में 'जिव्हाघात' का प्रयोग न करते हुए एक ही फूंक में स्वर बदलने से 'निरंतर' वादन होता है । अर्धचंद्राकृति आकार का '⁀' यह चिन्ह संबंधित स्वरों के ऊपर लगाकर निरंतर वादन सूचित किया जाता है ।

अपना घोष प्रांगणीय कार्यक्रमों के लिए प्रयुक्त होने के कारण हमारा वादन सांतर-प्रधान है । तथापि रंजकता की दृष्टि से कहीं कहीं निरंतर वादन भी किया जाता है ।

**आघात :** किसी विशिष्ठ स्वर का वादन उसके सहज स्तर से भी अधिक जोर लगाकर करना अपेक्षित है, तो उस स्वर के ऊपर '^' यह 'आघात-चिन्ह' अंकित करते हैं ।

आघात के अन्य प्रकार, जिनका प्रयोग संचलन की रचनाओं में नहीं होता है, बल्कि उद्‌घोष में होता हैं, निम्नानुसार है ।

$\overset{<}{\text{प}}$ इस स्वर की ध्वनि प्रारंभ में कम तथा धीरे धीरे अंत में बढानी चाहिए ।

$\overset{>}{\text{ग}}$ इस स्वर की ध्वनि आरंभ में अधिकतम तथा अंत में धीरे धीरे न्यूनतम होगी ।

$\overset{<>}{\text{म}}$ इस स्वर की ध्वनि क्रमशः प्रारंभ में न्यूनतम, मध्य में अधिकतम तथा अंत में पुनः न्यूनतम आएगी ।

परिणामकारीता बढाने के लिए इन चिन्हों से अंकित आघातयुक्त वादन का प्रयोग किया जाता है ।

**लयभंग :** किसी विशिष्ट (विशेषतः अंतिम) स्वर का वादन, उसके सामान्य कालमान से अधिक कालमान के लिए अपेक्षित हो, तो उसे 'लयभंग' के **'—>'** इस चिन्ह से सूचित करते हैं ।

**दीर्घयति :** यदि 'यति' एक गण से भी अधिक हो, तो उसे 'दीर्घयति' के '।⊢२⊣।' इस चिन्ह से दर्शाया जाता है । इस का अर्थ है, दो गणों की यति या विरोम । **'२'** के स्थान पर अन्य अंक लिखकर उतने गणों की यति सूचित करते हैं ।

**क्रमभेद :** जब पुनश्चरण में अंतिम गणों का वादन भिन्न प्रकार से अपेक्षित होता है तब इन गणों को आवृत्त करनेवाला कोष्टक ऊपर से लगाकर उसे **'१'** क्रमांक देते है तथा इसी प्रकार के कोष्टक में अपेक्षित भिन्न वादन के गण लिखकर उसे **'२'** क्रमांक देते है । इसे 'क्रमभेद' कहा जाता है । |१ :|| |२ | ||

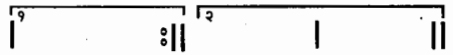

इसका अर्थ यह होता है कि चरण दूसरी बार बजाते समय क्र. १ कोष्टक से आवृत्त गणों के बजाय क्र. २ कोष्टक से आवृत्त गणों का वादन करना ।

**कण-स्वर :** मुख्य स्वर का वादन करते समय उसके किंचित पहले या बाद में किसी अन्य स्वर का अत्यल्प, स्पर्श-मात्र वादन अपेक्षित हो, तो इन अत्यल्प कालमान के स्वरों को 'कण-स्वर' कहते हैं । स्वराक्षर या ध्वन्याक्षर को आधा लिखकर कण-स्वर दर्शाते हैं । उदा. **स़ , र् , ग , म , ध , न ,  त्त** में **त्** , **त्त** में **ट** आदि

**ध्रुव पद :** रचना के जिस पंक्ति को प्रत्येक चरण के बाद बजाया जाता है उसे 'ध्रुवपद' कहते हैं तथा उसके अंत में इसका संक्षिप्त रूप **'॥ध्रु॥'** अंकित करते हैं ।

**प्रस्ताव पद :** रचना का वृत्त तथा शैली सूचित करनेवाले चरण को 'प्रस्ताव पद' कहते हैं । यह रचना के प्रारंभ में आता है ।

**सेतु पद :** रचना के वृत्त तथा शैली में बदल सूचित करते समय, दो चरणों के बीच आनेवाले चरण को 'सेतु पद' कहते हैं ।

**रचना लेखन :** प्रांगणीय तथा सांघिक वादन के लिए उपयुक्त ऐसी जो स्वरावलि बनायी जाती है, उसे 'रचना' कहते हैं । इसमें अनेक चरण हो सकते हैं । अच्छी रचना का प्रत्येक चरण अपने आप में एक सांगीतिक वाक्य (Musical Sentence) अथवा रचना का स्वयंपूर्ण भाग जैसा रहता है ।

लेखन के आरंभ में शीर्षक लिखते है । इस के प्रथम (याने बाएं कोने के) भाग में 'वाद्य का नाम' मध्य में 'रचना का नाम' (कोष्टक में उसका विशेष नाम या राग का नाम) तथा दाहिने कोने में 'ताल व लय' का उल्लेख करते हैं ।

रचना-लेखन के प्रारंभ में नाद-ब्रह्म का आद्य अक्षर **'॥ॐ॥'** ऐसा लिखना चाहिए । सामान्यतः एक पंक्ति में चार गण लिखते हैं ।